॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे ब्रह्म! मैं तेरी शरण में आया हूँ और जहाँ भी मैं जाता हूँ वहाँ तुझे ही दृष्पिात करता हूँ। प्राची दिक् में, पूर्व में अग्नि का प्रावधान हो रहा है और दक्षिण में इन्द्र बन करके रहते हो और प्रतीची दिक् में वरुण बन करके रहते हो उदीची दिक् में सोम बन करके रहते हो ज्ञान के भण्डार हों, ध्रुवा में पालन करने वाले विष्णु हो और ऊर्ध्वा में पालन करने वाला बृहस्पति कहलाता है। वह प्रभु! की उपासना करता है प्रातः काल कहता है कि प्रभु पाप करने के लिए कहाँ जाऊँ और मेरे द्वारा पाप क्यों हों? हे प्रभु! मुझे इतनी शक्ति प्रदान करो कि मैं पूर्व में अग्नि के तुल्य तेज को दृष्टिपात करता रहूँ, मैं दक्षिण में इन्द्र को दृष्टिपात करता रहूँ। और अन्न का जो भण्डार है जो मानव को वृत्त बनाता है। हे प्रभु! प्रतीची में तुम वरुण बन करके रहते हो और वह वरुण ही मेरे जीवन की सार्थकता है इसी प्रकार उदीची में सोम बन करके रहते हो। सोम किसे कहते हैं? ज्ञान को सोम कहते हैं, विज्ञान को सोम कहते है। विवेक को सोम कहते हैं वह धारण होने वाला सोम हैं योगीजन इसी सोम को पान करते हुए ज्ञान और विवेक से सने हुए अमृत को प्राप्त करते हैं। तो उनकी वाणी में सोमपन आ जाता है। प्रभु! आप ध्रुवा में पालन करने वाले विष्णु बन करके रहते हो, आज हम सबकी पालना करने वाले हों और ऊर्ध्वा में प्रभु! आप बृहस्पति बन करके मेरे जीवन के रक्षक बनते हो, क्योंकि रक्षा विद्या और विवेक से होती है ज्ञानी ही संसार में महान कहलाता हैं और उसका नेतृत्व करने वाला बृहस्पति कहलाता हैं।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 522 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 597
वर्ष : 44 44 समग्र वर्ष : 50

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2.	अनुक्रम		4
3.	साधना और दर्शन	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-23
4.	याग महिमा	पूज्यपाद-गुरुदेव	24-36
5.	ऋषियों के उद्‌गार		37
6.	Creation, and the Institution of National Order	Pujyapad-Gurudev	38-39
7.	दान, पुस्तकों की सूची व प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि		40-42

चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (पूर्व शृङ्गी ऋषि जी) के शुभ आशीर्वाद से प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग का आयोजन लाक्षागृह बरनावा में श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय के प्रांगण में दिनाँक 13 मार्च, 2016 से 20 मार्च, 2016 तक बड़े हर्ष एवम् उल्लास के साथ आयोजित किया जा रहा है जिसमें आप सब अपने सम्बन्धियों व मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

श्री गाँधी धाम समिति (पञ्जी.)

website : www.shringirishi.in
Email : contact@shringirishi.in

॥ ओ३म् ॥

साधना और दर्शन

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है। क्योंकि उस परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान इतना महान् है, उसके विज्ञान को कोई भी मानव सीमा में ला नहीं पाता क्योंकि वह सीमा से रहित है। वह परमपिता परमात्मा की एक-एक वस्तु पर मानव जब अनुसन्धान करने लगता है उस अनुसन्धान की बेला में जब प्राणी प्रवेश करता है तो उसका विज्ञान और ज्ञान मानव के समीप आने लगता है और मानव यह विचारता रहता है कि उसका विज्ञान कितना महान् है? उसकी महत्ता का वर्णन करता रहता है और वह जब परमात्मा के निकट चेतना में दग्ध (चेतनामय) हो जाता है तो वह नेति-नेति का प्रतिपादन करता है। क्योंकि उस मानव का जो ज्ञान है, जिस रथ में यह आत्मा विद्यमान रहता है उस रथ में विद्यमान हो करके यह आत्मा सीमा में बद्ध हो करके उसका चिन्तन करता रहता है और उसी सीमा तक वह उसे जानता है। परन्तु जब सीमा से रहित हो जाता है तो वह नेति-नेति का क्या? वह मौन हो जाता है। सर्वत्र इन्द्रियाँ उस मानव की शान्त हो जाती हैं, उसका जो विषय है, उसकी जो धारा है वह समाप्त हो जाती है।

साधना

आओ मेरे पुत्रो! आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट नहीं करूँगा। केवल तुम्हें उस क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ जहाँ ऋषि-मुनि विद्यमान हो

करके साधना की चर्चाएँ, प्राणों की चर्चाएँ, इन्द्रियों का साकल्य बना करके यागों की चर्चाएँ करते रहते थे। हमने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था कि नाना प्रकार के यागों का चलन, नाना प्रकार के यागों का चयन, हमारे वैदिक साहित्य में आता रहता है। उसके नाना कर्म-काण्ड के कर्म भी आते रहते हैं परन्तु उस यज्ञ में जो प्रधानता दी जाती है वह इसी आभा में दी जाती है कि मानव अपनी यज्ञशाला को यजमान अपना रथ स्वीकार करके और वह मधु-मण्डलों में ओत-प्रोत हो जाता है परन्तु आज मैं तुम्हें ऐसे विज्ञान में ले जाना नहीं चाहता हूँ। आजका हमारा जो आत्मिक रथ है उसमें मानव साधना में जाना चाहता है, साधना करना चाहता है। प्रत्येक मानव साधना के उस क्षेत्र में रमण करना चाहता है, उस साधना में जो वास्तव में साधना है। मौन रह करके अनुसन्धान करता हुआ मेरे पुत्रो! ऐसी स्थली में विद्यमान हो करके गान गाने लगता है जिस गान को श्रवण करने के लिए बेटा! सिंहराज और मृगराज आते हैं। सर्पराज भी उसके उदार वाक्यों की जो सुगन्धि है उसे पान करना चाहते हैं। क्योंकि मानव में नाना प्रकार की सुगन्धि उत्पन्न होती रहती है। वह जो यौगिक सुगन्धि है, वह जो यौगिकता है वह मानव को ऊँचा बना देती है।

मेरे पुत्रो! बहुत सुन्दर वाक्य इससे पूर्व शब्दों में उच्चारण किये थे कि राष्ट्र साधकों से ऊँचा बनता है, राजा भी साधक होता है और प्रजा भी साधक होती है परन्तु जब दोनों ही साधना में परणित रहते हैं तो राष्ट्र में महत्ता की दीपावली का प्रकाश हो जाता है। मानो वह जो प्रकाश है उसे लेने के लिए जो आत्म तत्व इस गृह को जानता है, जिस गृह के लिए रमण कर रहा है, क्रियाशील हो रहा है उसको नहीं जानता। अरे! कैसा आश्चर्य है उस मेरे देव का, कैसा आश्चर्य है कि अन्तर्हृदय में आत्मा विद्यमान है परन्तु मानव उस अन्तरात्मा को नहीं जानता। वह नहीं जानता है क्योंकि उसे जानना चाहिए। इसके लिए साधना की आवश्यकता है, यौगिकता की आवश्यकता है। क्योंकि प्रत्येक मानव साधना और यौगिकता चाहता है।

साधक का प्रथम चिन्तन

इसलिए देखो वह जो साधना है वह क्या है? प्रातःकालीन रात्रि के काल में सबसे प्रथम साधक यह विचारता है, चिन्तन करता है कि संसार में यह रात्रि क्या है? जिस रात्रि के ऊपर रात्रि-रात्रि पुकारता रहता है। परन्तु वेद का ऋषि, वेद का जो साधक है, प्रकाश का जो साधक है वो कहता है कि परमात्मा के राष्ट्र में परमात्मा के साधकों के लिए रात्रि नहीं होती, साधकों के लिए रात्रि का अभाव होता है परन्तु रात्रि किनके लिए होती है? रात्रि उनके लिए होती है जो दूसरो के ऊपर आक्रमण करते रहते हैं, कामातुरता में रमण रहते हैं। मानो **अज्ञान के जितने कर्म हैं उनमें सबमें रात्रि होती है और जितना भी ज्ञान का, साधना का क्षेत्र है उसमें मेरे पुत्रो! रात्रि का अभाव रहता है।** रात्रि कोई वस्तु नहीं है। परन्तु देखो, मैं रात्रि के सम्बन्ध में, रात्रि के क्षेत्र में तुम्हें न ले जाऊँ।

केवल यह कि वह मानव **देवता** कहलाता है, वह साधक साधना में रमण करता हुआ वह मानव देवता कहलाता है, जो प्रभु के राष्ट्र में आ करके रात्रि को अनुभव नहीं करता। वह अज्ञान को जब अनुभव में नहीं लाता, वह ज्ञान के प्रकाश में प्रत्येक वस्तु को दृष्टिपात करता है। प्रत्येक मानवता को प्रकाश में लाना चाहता है। इसलिए प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या, प्रत्येक मेरा प्यारा ऋषि-मण्डल सारे प्रकाश के लिए प्रार्थना करता रहता है। वह यह कहता है कि मैं ऐसे प्रकाश में चला जाऊँ जिस प्रकाश में 'सर्पश्च मनो' न तो विषैले प्राणी दुःख देने वाले हों और न हिंसक प्राणी मेरी हिंसा करने वाले हों। मुनिवरो! उनका जो तेज है, उनका जो प्रकाश है, उस प्रकाश में हिंसक प्राणी आच्छादित हो जाएँ और उसमें वह रमण करते हुए कर्त्तव्य की भावना और विचित्रता में आते चले जाएँ। आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने के लिए नहीं आया हूँ, केवल तुम्हें यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ कि साधना

में प्रवेश होना चाहिए। ''निर्जन मानो निर्जलः'' है, क्या रात्रि अप्रः नहीं? **देखो भयँकर वन है जहाँ मानव साधना कर रहा है और वह साधना में चिन्तन कर रहा है, उड़ान उड़ रहा है।**

पवित्र अन्न

परन्तु साधना के लिए परम्परा से यह कहा है कि साधना के लिए अन्न का होना बहुत अनिवार्य है। मैंने इससे पूर्व काल में तुम्हें प्रकट कराया है कि हमारे ऋषि-मुनियों ने जिन्होंने तप किया है, जिन्होंने ऊँची-ऊँची पोथियाँ का निर्माण किया है, जैसे उपनिषद् विद्या के जानने वाले हैं, उपनिवेष में रमण करने वाले हैं, ऐसे जो प्रकाशक होते हैं, ऐसे जो देवता होते हैं, जो प्रकाश के लिए सदैव याचना करते रहते हैं तो वह प्रकाश में देखो अन्न को ऊँचा बनाते हैं।

मैंने बहुत पुरातन काल में यह निर्णय देते हुए कहा कि वह प्राणों को जानते हैं और प्राणों में जो विभक्त क्रिया हो रही है, मन जो विभाजन कर रहा है, वह अपनी क्रिया को जानने वाला उपासक मुनिवरो! देखो ऊँची उड़ान उड़ रहा है, ऊँची वार्ता ला रहा है और वह वायुमण्डल में अपने भोज्य को प्राप्त कर रहा है। वह कैसे करता है? जैसे नेत्रों के साथ मानव की शक्ति का समापन होता है, घ्राण के द्वारा शक्ति समाप्त होती है। मुनिवरो! प्रत्येक इन्द्रिय के द्वारा शक्ति ही समाप्त हो जाती है। यदि उसमें विकृतता है, उसमें विडम्बना है तो वह उसमें परणित हो करके वह दोषारोपण करता रहता है, शक्तिहीन बनता रहता है प्राणी परन्तु नेत्रों में तो वह विश्लेषण धर्म का करता हुआ धर्म ला रहा है। मुनिवरो! घ्राण से यह परमाणुओं का आदान-प्रदान कर रहा है। श्रोत्रों के द्वारा असत्य शब्दों को ग्रहण नहीं कर रहा, वह सत्य शब्दों को रमण करा रहा है। वह तो शब्द ही शब्द है। वह जो सत्यमय जीवन है वही तो मानव को देवता बनाता है, मानव को पवित्र बनाता है।

इन्द्रियों पर अनुसन्धान

इसलिए हे मेरे भोले ऋषियों! आज तुम साधना में प्रवेश करना चाहते हो तो तुम भयङ्कर वन में विद्यमान हो करके तुम अपनी इन्द्रियों पर अनुसन्धान करो, अपनी इन्द्रियों के ऊपर अनुशासन करने के लिए तत्पर रहो। जब तुम्हारी प्रत्येक इन्द्रिय धर्म में गुथ जाएगी, धर्म में परणित हो जाएगी जैसे 'ओ३म्' रूपी जो धागा है उस ओ३म् रूपी धागे में प्रत्येक वेद की ऋचा पिरोयी हुई रहती है, प्रत्येक वेद का मन्त्र पिरोया हुआ रहता है तो वह एक माला बन जाती है। ओ३म् रूपी सूत्र में जितना ब्रह्माण्ड है, जितना भी ज्ञान और विज्ञान है, चैतन्य जगत् है बेटा! ओ३म् रूपी धागे में पिरोया हुआ है।

इसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो जब इन्द्रियों का शोधन हो जाता है तो मानो एक धागा है उस धागे में मानव की प्रत्येक इन्द्रिय के विषय पिरोए जाते हैं। वह है प्राण, देखो वह है मन, मन और प्राण दोनों, जब इनमें इन्द्रियों के विषय पिरोए जाते है तो जितना भी शरीर का मानो ब्रीही है जितना भी व्यापकवाद है उसके द्वारा सिमट जाता है और सिमट करके वह अपनी साधना के क्षेत्र में अपने में और परमात्मा रूपी जो चेतना है उसमें मुनिवरो! दोनों को एकता में प्रवेश कर देता है। दोनों को वह एक ही सूत्र में दृष्टिपात करने लगता है और वह सूत्र क्या? चेतना है। परन्तु आज मैं मुनिवरो! विशेष चर्चा प्रकट करना नहीं चाहता हूँ। मैंने बहुत पुरातन काल में यह कहा कि प्राण के द्वारा ही अन्तरिक्ष में से परमाणु को लिया जाता है, प्राण के द्वारा ही मानव विज्ञान की उड़ान उड़ता रहता है, प्राण के द्वारा ही मानव साधना करता है। **क्योंकि मन को संयम में लाने केवल प्राण से ऊर्ध्व गति वाली कोई वस्तु नहीं है। इसलिए प्राण ही होना चाहिए और वह जो प्राण है मन के सूत्र को अपने में धारण कर लेता है, जब अपने में धारण कर लेता है, तो मेरे पुत्रो! वह मानव धन्य हो जाता है।**

प्राण विद्या

आओ मुनिवरो! मैं आज कौन से क्षेत्र में चला गया हूँ। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है पुत्रो! जब हम पूज्यपाद गुरूओं के द्वारा विद्यमान होते थे और गुरूओं से कहा करते थे हे प्रभु! मानव चेतना क्या है? आत्म चेतना क्या है? साधना क्या है? मैंने कई काल में अपने शिष्यों को वर्णन कराते हुए कहा कि वह काल मुझे स्मरण आता है, जब मेरे पूज्यपाद वाणी के ऊपर अनुसन्धान करते रहे। वाणी क्या है? जो 84 वर्षों तक मौन रह करके व्रती बन करके वह वाणी का रसास्वादन पान करते थे। वाणी कितनी विचित्र है। वाणी से मानव चाहता है। वह अग्नि है, वाणी के अनुसन्धानवेत्ता तुम तो कहते हो अन्तरिक्ष में से परमाणुओं को, अन्तरिक्ष में जो विद्युत् कार्य कर रही है अपनी विद्युत् का और बाहरीय विद्युत् का दोनों का अपने में समावेश कर कर लेता है। समावेश करके जब मानव प्राण की क्रिया को ले करके प्राण और अपान को ले करके वाणी से जब इसका सम्बन्ध हो जाता है तो दोनों एक सूत्र में आ करके जब यह व्यान प्राण के साथ में इसकी ऊर्ध्व गति होती है तो उस समय जब यह गान गाता है, प्राणायाम करके गान गाता है, प्राण को अनुशासन में करके गान गाता है, मन को सूत्र में लगा देता है तो ऐसा कहते हैं कि **नाना प्रकार की दीपावली प्रत्येक गृह में प्रकाशित हो जाती है।**

मैंने कई काल में वर्णन करते हुए कहा था, ''प्राणः अहीः लोकः'' यह नाना प्रकार की विद्याएँ ऋषि-मुनियों के मस्तिष्कों में रही हैं, ऋषि-मुनियों की धाराओं में रही हैं। पुत्रो! वह भी काल मुझे स्मरण है, महात्मा दधीचि के आश्रम में दोनों अश्विनी कुमार जब आयुर्वेद विद्या का अध्ययन करके ब्रह्मविद्या में प्रवेश करते हैं और ब्रह्मविद्या में साधनावादी कहते हैं कि महाराज अश्विनी कुमार वह शक्ति को अपने में संग्रहीत करना जानते थे, प्राण की क्रिया को जानते थे, प्राण की

विद्या को जानते थे और पशुओं की विद्या को जानते थे। आयुर्वेद में प्रवेश होने वाला जानता है, परन्तु जब वह ऋषिवर ब्रह्मविद्या प्रवेश करा रहे हैं फिर उसके कण्ठ के भाग को दूर कर देते हैं अश्व के मस्तिष्क से। क्योंकि अश्व नाम सूर्य को भी कहा जाता है वैदिक साहित्य में और अश्व नाम घोड़े को भी कहा जाता है। कहा जाता है कि अश्व का मस्तिष्क मानो कण्ठ पर स्थित करके और वह उपदेश पान करने लगे।

ब्रह्मविद्या

मानव यह कहता है कि यह कैसे सम्भव हो सकता है? मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पुत्रो को निर्णय देते हुए कहा था कि यह विद्या हमारे यहाँ परम्परा से रही है, यह वैदिक साहित्य में रही है। वैदिक मन्त्रार्थ इस प्रकार के आते हैं, सूक्त हैं, इस प्रकार के नाना प्रकार के कि प्राणियों की वाणी को हम अपने में धारण कर सकते हैं, अपने में हम पालन कर सकते हैं। जहाँ तक विज्ञान और आयुर्वेद का सम्बन्ध हैं, आयुर्वेद में ऐसी-ऐसी विद्याएँ हैं, उनके आचार्यों ने कहा कि वह अपने कण्ठ को कहीं स्थिर कर देते हैं। महात्मा दधीचि के कण्ठ का विभाग छः माह तक औषधियों में रहा। अश्व के मुख से वह ब्रह्मविद्या का पान कर रहे हैं। उस ब्रह्मविद्या में परणित होना था क्योंकि **ब्रह्म विद्या का जो सम्बन्ध है वह अन्तरिक्ष से कहलाया गया है,** ब्रह्मविद्या का जो सम्बन्ध है वह मानव के हृदय से कहलाया गया है।

तीन प्रकार की धाराएँ होती हैं ब्रह्मविद्या में प्रवेश होने में। एक ब्रह्मविद्या वह कहलाती है जो मस्तिष्क से सम्बन्ध रखती है। इसका अन्तरिक्ष से सम्बन्ध रहता है और वही हृदय है क्योंकि परमात्मा का हृदय यह बाह्म जगत है और आन्तरिक जगत् मानव का हृदय है। ऐसी-ऐसी औषधि हैं कि मानव प्रत्येक प्राणी की वार्ता को जान लेता है। अश्विनी कुमार उस विद्या को पान करते थे। परन्तु रहा यह कि मानव के कण्ठ पर अश्व का कण्ठ कैसे आ गया? मस्तिष्क में अन्तर्द्वन्द्व

रहता है। परन्तु ऐसी-ऐसी विद्याएँ यन्त्रों के द्वारा थीं, अश्विनी कुमार के कि यन्त्रों के द्वारा उन्होंने स्थिर किया और कुछ समय के लिए ब्रह्मविद्या को पान करने लगे। ये विद्याएँ हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में आती है। देखो महात्मा दधीचि की एक पोथी थी, उस पोथी का नाम ही **'ब्रह्मविद्या'** था। अब तो मुझे प्रतीत नहीं वर्तमान के काल में वह पोथी प्रतीत होती है अथवा नहीं होती। परन्तु देखो इस सम्बन्ध में मैं कोई चर्चा नहीं देना चाहता। विचार-विनिमय क्या? यह तो विद्या है। इस विद्या का योग के द्वारा, क्रियाओं के द्वारा अनुसन्धान करना है। परन्तु आज मैं इस क्षेत्र में जाना नहीं चाहता हूँ।

साधना में प्रवेश

मैं यह उच्चारण कर रहा था कि मानव को अनुसन्धान करना है, मानव को साधना करनी है। साधना में प्रवेश करना है तो सबसे प्रथम अन्न को पवित्र बनाता हुआ चित्त के अनुशासन में प्रवेश कर जाएँ। अनुशासन किसे कहते है? कौन मानव किस प्रकार का है? कैसी वार्ता प्रकट करनी है? किस स्थली पर हमें साधना करनी है, गायत्री माँ की गोद में जाना है, श्रद्धा को उत्पन्न करना है। देखो यह सब अन्न से उत्पन्न होती हैं इसलिए ऋषियों ने कहा कि अन्न पवित्र होना चाहिए।

मुनिवरो! देखो इसके पश्चात् हमने बहुत पुरातन काल में तुम्हें यह निर्णय देते हुए कहा था, अपना वाक्य प्रकट करते हुए कहा था कि यह जो साधना का क्षेत्र है इसका सम्बन्ध ज्ञान से है, विवेक से है और विवेकी प्राणी मुनिवरो! चिन्तन करता है और वह चिन्तन करने वाला परमात्मा से वार्ता कर रहा है। परमात्मा से वार्ता करता हुआ कहता है कि परमात्मन् तो महान् है, परमात्मन् तो विचित्र है। वह परमात्मा से आत्मा की वार्ता कर रहा है। **चिन्तन में प्राण के क्षेत्र का और मन के क्षेत्र का समन्वय करने पश्चात् एक अनुसन्धान कर रहा है।** वह

पवित्रता को ला रहा है। इसी प्रकार आजका हमारा यह वेद का ऋषि, आजका हमारा यह वाक्य क्या कह रहा है? मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ, मैं तो केवल महानन्द जी के कथनानुसार 'साधनाप्रवेः' साधना की वार्ता कर रह हूँ। परन्तु रहा यह कि विशेष साधना की चर्चाएँ तो बेटा! सम्मुख हो करके प्रकट की जा सकती है, सम्मुख हो करके क्रिया में प्रवेश कराना होता है।

पूज्यपाद द्वारा महाराजा अश्वपति के यहाँ राष्ट्र निर्माण

शिक्षा-प्रणाली

मैं बेटा! बहुत काल तक महाराजा अश्वपति के यहाँ **अध्ययन का कार्य** करता रहा। परन्तु अध्यापन का जब कार्य करता तो प्रातःकाल में ब्रह्मचारियों की एक पंक्ति लगा करती थी। वह जो पंक्ति लगती थी, उस पंक्ति में प्राण के निदान करने का, प्राण और मन दोंनो को एक सूत्र में लाने का प्रयास करता रहा। परन्तु देखो उनमें ब्रह्मचारियों को यौगिक क्रियाएँ, अनुसन्धान कराता रहा। क्योंकि **कोई भी मानव, कोई भी अध्ययन करने वाला प्राणी बिना प्राणायाम किये ब्रह्मचारी नहीं रह सकता।** आज कोई भी ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारी रहना चाहता है, अध्ययन करना चाहता है तो अध्ययन के साथ में गार्हपत्य नाम की अग्नि-पूजा करने वाला हो। **गार्हपत्य नाम प्राणायाम का है।** जो प्राणायाम करने वाला हो, मन को एक सूत्र में लाने वाला हो। मेरे पुत्र ने बहुत ऊँची बातें की थीं। **अध्यापन का कार्य वही कर सकता है जो स्वयँ ब्रह्मचारी हो, स्वयँ चरि (चरित्र) की रक्षा करने वाला हो, जो स्वयं अनुसन्धान करने वाला हो, जो स्वयँ प्राण की क्रिया को जानने वाला हो।** यह मानव देखो विद्यालय में जब विद्या अध्ययन कराता है, अध्ययन की क्रिया उसके समीप होती हैं, उसमें साधना का एक काण्ड होता है। साधना की एक प्रतिभा होती है। तो ब्रह्मचारी जब विद्यालय

से उतीर्ण होता है तो वह राष्ट्र और समाज को महान् बनाता चला जाता है। वह तपस्वी कहलाता है।

हे राजन्! तेरे राष्ट्र में कैसा कक्ष होना चाहिए। ऐसा क्षेत्र होना चाहिए जिस क्षेत्र में परम्परा से विद्यालयों में ऊँचे-ऊँचे कार्य, ऊँचे-ऊँचे ब्रह्मचारी तर्क पूर्वक आचार्य से चरणों में ओत-प्रोत हो करके अनुसन्धान करने वाले हों। मुझे वह काल स्मरण है यहाँ का ब्रह्मचारी अध्ययन करता हुआ ध्रुव मण्डल की यात्रा करता है, ध्रुव-मण्डल में प्रवेश करता है। देवर्षि नारद मुनि महाराज अपनी साधना के बल से, अपने वैज्ञानिक बल से वह अपनी पादुका में विद्यमान हो करके पृथ्वी से उड़ान उड़ता, वह मंगल के प्राणियों से वार्ता प्रकट करता था, वह सूर्य लोकों में प्रवेश करता है। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है। साधना के क्षेत्र में ही नहीं विज्ञान के क्षेत्र में मानव प्रवेश करता रहा है। आज मैं विशेष चर्चा प्रकट करना नहीं चाहता हूँ केवल तुम्हें यह वाक्य प्रकट कराने आया हूँ कि ब्रह्मचारी ऐसे वैज्ञानिक देवर्षि नारद जैसे विज्ञान के पण्डित महा ब्रह्मवेत्ता थे। **वह कितना सौभाग्यशाली प्राणी है जो भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान दोनों को एक सूत्र में पिरोने वाला हो।** एक ही सूत्र के दोनों मनके हैं। वह परमाणु विद्या और आध्यात्मिक विद्या दोनों का समन्वय करके ध्रुव की क्या सूर्य लोकों की यात्रा करने वाला हो। प्रत्येक मानव इस संसार में यात्री बनने के लिए आया है **प्रत्येक मानव यात्री है,** क्योंकि यह परमात्मा का जो जगत् है, परमात्मा का जो क्षेत्र है, यात्रा करने का एक क्षेत्र कहलाता है। यहाँ प्रत्येक मानव यात्री बना हुआ है, यहाँ प्रत्येक मानव यात्रा करने के लिए आया है और यात्रा में करना क्या है? वेद की विद्या को जानना चाहता है, वह विज्ञान में प्रवेश करना चाहता है, वह प्रकाश के एक ऐसे मानवीय और ऊँचे क्षेत्र में प्रवेश करना चाहता है जहाँ प्रवेश करने के पश्चात् मानव में महत्ता की तरङ्गे ओत-प्रोत हो जाती हैं। आओ, मैं कोई विशेष चर्चा

प्रकट करने नहीं आया हूँ। केवल साधना की चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। केवल साधना की चर्चा तो मैं इतनी उच्चारण कर सकता हूँ।

साधना का विषय एक ऐसा है, उसमें मैं इन्द्रियों की साधना की चर्चा कर सकता हूँ। मैं जहाँ तक तुम्हें साधना कराने का सम्बन्ध है, मेरे पुत्र! तुम स्वयँ जानते हो वह साधना तो मुखारविन्द के समीप हो करके साधना की क्रियाओं में प्रवेश कराया जाता है। क्योंकि बहुत काल तक बेटा! मैं साधना कराता रहा हूँ, साधना में प्रवेश कराता रहा हूँ परन्तु आज तो बेटा! **आपत्तिकाल है,** इसमें कुछ नहीं कहा जा सकता। इसमें कोई वाक्य हम प्रकट नहीं कर पायेंगे। केवल आज मैं तुम्हें यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ, आज तुम्हें मैं यह वाक्य प्रकट कराने के लिए आया हूँ, कि मेरे पुत्रो! मेरे देवताओं! तुम अपने जीवन में महान् बनते चले जाओ। महत्ता के क्षेत्र में ही महत्ता की प्रक्रियाओं की ओर उन्मुख होकर ही वह जीवन प्राप्त होता है प्रत्येक प्राणी को। आओ मेरे पुत्रो! आज मैं क्या उच्चारण कर रहा था कि राजा को अपना राष्ट्र ऊँचा बनाना है तो मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा कि महाराजा अश्वपति के यहाँ विद्यालयों में क्रियात्मक कार्य होता रहा है। सबसे प्रथम योग उसके पश्चात् राष्ट्र अपने में कैसे क्रियाशील बनेगा। महान् और कर्त्तव्य पारायणता आएगी। यह वाक्य प्रकट करता रहा हूँ, अनुसन्धान करता रहा हूँ।

माताओं को आयुर्वेद की शिक्षा

मेरी पुत्रियाँ जीवन में ऊँचा और **मेरी पुत्रियाँ अपने ऊँचे पुत्रों को जन्म देने वाली उस काल में होती हैं जब उनके द्वारा त्याग और तप होता है, तपस्या होती है।** तो इसीलिए तपस्या होनी चाहिए। तपस्या किसे कहते हैं? ऋषि-मुनियों ने वैदिक साहित्य में नाना प्रकार की विद्या दी हैं। मेरी प्यारी माता के लिए कहा है, **हे माता! तू सन्तान को जन्म दे परन्तु तू अनुशासन में रहकर जन्म दे।** वेद का ऋषि

कहता है कि हे माता! तू अनुशासन में रहकर सन्तान को जन्म दे। यह माता कैसी है? अनुशासन के लिए कह रहा है वेद का ऋषि। देखो, वह अनुशासन ऐसा है कि माता प्रातःकालीन सूर्य के प्रकाश में तपने वाली हो। सूर्य का प्रकाश क्या ज्ञान में तपने वाली हो। **प्रत्येक माता को आयुर्वेद का अध्ययन होना चाहिए।** मैंने सबसे प्रथम जब महाराजा अश्वपति के यहाँ राष्ट्र का निर्माण होने लगा, राष्ट्र की नियमावली बनने लगी उसमें कहा कि मेरी प्यारी माताओं को विद्यालय में आयुर्वेद की शिक्षा होनी चाहिए, यहाँ आयुर्वेद के आचार्य बहुत सूक्ष्म होते हैं। मेरी प्यारी माता जानती है कि बालक का कैसे निर्माण हो? कौन-सा ऋतु ऊँचा होता है? कौन-सा दिवस ऊँचा होता है? कौन-सी तिथि ऊँची होती है जिस तिथि में पुत्र का निर्माण किया जाता है। तो यह विद्याएँ आयुर्वेद में हैं इसलिए माताओं को, प्यारी पुत्रियों को मैंने सबसे प्रथम यह कहा था जब अश्वपति के यहाँ राष्ट्र का निर्माण होने लगा कि मेरी प्यारी माता को आयुर्वेद का ज्ञान होना चाहिए। आयुर्वेद का ज्ञान होगा तो माता जिस शिक्षा को ले करके पुत्र को जन्म देना चाहती हो वह इच्छा मेरी प्यारी माता की पूर्ण होती है। क्योंकि वह उसी के अनुसार अनुशासन में रह करके, ब्रह्मचर्य से रह करके सन्तान को जो जन्म देती है वह माता सौभाग्यशाली है।

आज मैं तुम्हें एक माता की चर्चा करने आया हूँ और वह कौन सी माता है? महात्मा महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज की माता थी। महात्मा महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज की माता का नाम **'उलखा देवी'** उनके पिता का नाम था **'स्वर्ण केतु'** ऋषि वे–दोनों वनों में अपने विचार में ऊँचे रहते थे। आयुर्वेद की पण्डिता उलखा भी पूर्ण ब्रह्मवेत्ता थी। उनके हृदय में कुछ समय के पश्चात् यह पिपासा जागी कि प्रभु! हमारी इच्छा यह है पतिदेव! कि हम अपने विद्यालय में एक विशिष्ट बालक को जन्म देना चाहते हैं। मेरी प्यारी माता क्या कहती है?

विद्यालय क्या है? माता अपने गर्भाशय को विद्यालय उच्चारण कर रही है और यह कहती है कि विद्यालय में हम एक महान् बालक को जन्म देना चाहते हैं और वह होना चाहिए। उनके उच्चारण करते ही ऋषि कहता है देवी! इच्छा तो मेरी भी यही है। परन्तु देखो कुछ समय के पश्चात् उन्होंने आयुर्वेद का अध्ययन किया, उन्होंने ब्रह्मविद्या का अध्ययन किया। तो उस समय देखो कुछ समय के पश्चात् वह तपस्वी बन करके एक बालक को जन्म दिया। जिसका नाम 'वशिष्ठ मुनि' कहलाता था। बाल्यकाल का नाम उनका **'वरुणव्रती केतु'** कहलाया जाता था। परन्तु जब वह विद्या अध्ययन करता माता उसे लोरियों का पान कराती तो वह कहा करती बालक तू वशिष्ठ है और तुझे ऐसे विद्यालय में अध्ययन कराया है जिससे मेरा नामोकरण (यश) ऊँचा रहेगा। मेरा नामोकरण रहे न रहे परन्तु तू संसार में विशिष्ट बनकर रह। वह मेरी प्यारी माता अपने गर्भाशय को विद्यालय उस काल में उच्चारण कर सकती है जब वह स्वयँ संयमी होती है। इस विद्यालय में बालक को जन्म देने से किसी मानव का ब्रह्मचर्य नष्ट नहीं होता। वह ब्रह्मचर्य ज्यों का त्यों बना रहता है। वह ''पूर्ण मदः पूर्णमही।'' **मानो उसमें से पूर्ण को निकासना है, पूर्ण में से पूर्ण को जन्म देता है। महान् पूर्ण को जन्म देता है।** पूर्ण ऋषि है, माता है परन्तु उसमें से वशिष्ठ को महापूर्ण बना रहा है। हास्य.... अहा यह वेद की पवित्र विद्या। माता यह कहती है कि यह विद्यालय है। **माता का गर्भाशय वास्तव में विद्यालय है।** परन्तु देखो वशिष्ठ मुनि महाराज ब्रह्मवेत्ता हुए और ब्रह्मवेत्ता होकर के दोनों ब्रह्मचारी रहे, संयमी रहे और एक सन्तान को वशिष्ठ ने जन्म दिया। माता भी एक पुत्र को जन्म देती है। पिता भी एक पुत्र को जन्म देता है। ऋषि कहता है हे देवी उलखा! हम एक समय संयमी एक समय ब्रह्मचर्य पूर्वक रज को प्रवेश करके विद्यालय में निर्माण करने वाला पिता और माता विद्यालय में निर्माण करती है, प्रभु

निर्माणवेत्ता उस निर्माण को कर देता है। परन्तु माता उसमें सहायक बनती है और बालक को बुद्धिमान बना देती है।

यह विचारधारा जब वैदिक साहित्य से हमें प्राप्त होती है, वैदिकता से प्राप्त होती है तो मेरी प्यारी माता उस समय एक वशिष्ठ मुनि को जन्म दे रही है। अहा कैसा ऊँचा देखो एक ही समय में रजस्त्व, वीर्यत्व उसमें प्रवेश होकर के जन्म दिया जा रहा है। पति-पत्नी जीवन भर संयम से रहते हैं, जीवन भर साधना में रहते हैं, जीवन भर वैज्ञानिक बने रहते हैं, जीवन भर ब्रह्मचारी रहते हैं। वेद में ये विद्याएँ प्राप्त होती हैं मेरी प्यारी माता जैसा मेरे पुत्र ने कई काल में कहा है कि वशिष्ठ को जन्म दे। तू यहाँ ऐसे महान् पुरुषों को जन्म दे जो प्रकाश ही प्रकाश में रमण करने वाला हो, अन्धकार तेरे जीवन में न आए।

अश्वपति के काल में यह नियम था कि माताओं को ब्रह्मचारिणयों को आयुर्वेद की विद्या दी जाती और देखो माता से पहले पुत्र का निधन नहीं होता। माता से पूर्व और पिता से पूर्व पुत्र का निधन उस काल में नहीं होता जबकि माता-पिता अपने पुत्र को वास्तव में जन्म देते हैं और जैसे यहाँ वर्षाकाल में शीतलता से नाना औषधियाँ उत्पन्न हो जाती हैं यदि माता पिता भी इसी प्रकार का जन्म देते हैं तो वह सदैव जीवन में अपने नेत्रों से अश्रुओं का ही पात होता रहता है। विचार-विनिमय क्या? आज मैं तुम्हें ऐसे क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, ऐसी विद्याओं को वर्णन कराना चाहता हूँ पुत्रो! जहाँ देखो राष्ट्र का नियम ऊँचा बनता है, राष्ट्रीयता आती है, सत्ययुग आता है उनसे।

जब मेरी प्यारी पुत्री आयुर्वेद की बुद्धिमती होती हैं मानो वह चिकित्सा करती हैं। मानव की चिकित्सा जितनी उदारता से माता कर सकती है इतना मानव नहीं कर सकता। मानव यदि चिकित्सक है तो वह उदर के ऐश्वर्य में परणित हो जाता है। माता यदि चिकित्सक है,

अपने पुत्र को उस विद्या से निदान कर रही है और वह प्रत्येक गृह में आयुर्वेद की पण्डिता है तो देखो, गृह आश्रम में प्रवेश होने वाले रुग्णों के द्रव्य का दुरुपयोग नहीं होता। तो इसलिए मैंने बहुत पुरातन काल में पुत्रो! तुम्हें यह निर्णय दिया कि आयुर्वेद ऊँचा होना चाहिए।

सबसे प्रथम नियम राजा के राष्ट्र में यह हो यदि कोई राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है। **विद्यालयों में ब्रह्मचारियों को प्राणायाम की शिक्षा होनी चाहिए।** ब्रह्मचारी ऊँचे हों और जहाँ गुरुओं की परम्परा ऊँची बनती है। जब राष्ट्र का निधन होना प्रारम्भ होता है वह विद्यालयों से होता है। विद्यालय में यदि आचार्य सुन्दर नहीं है, आचार्य संयमी नहीं है तो वहाँ ब्रह्मचारी भी कदापि ऊँचे नहीं होते और यदि आचार्य घृणित है, आचार्य घृणा में प्रवेश हो करके विद्यालय में शिक्षा दे रहा है तो ब्रह्मचारी भी घृणित हो जाते हैं। ब्रह्मचारियों में पक्षपात आ जाएगा। मानव कैसे पक्षपात रहित बने? उसके द्वारा तप होना चाहिए उसके द्वारा प्राणायाम होना चाहिए, उसके द्वारा महत्ता की शिक्षा होनी चाहिए। विद्या को पान करता हुआ मुनिवरो! देखो एक महत्ता में प्रवेश करता चला जाए।

आजका हमारा वेद का आचार्य यह क्या कहता है? ऋषि क्या कह रहा है? मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ राष्ट्र को स्वर्ग बनाना है, मानव को स्वर्गवादी बनाना है तो माता वशिष्ठ जैसे पुत्रों को जन्म दे और राजा के यहाँ नियमावली होनी चाहिए कि आयुर्वेद की विद्या हो। प्रत्येक मेरी प्यारी माता अपने पुत्रो की चिकित्सा करने वाली हो। गर्भाशय के रजस्तव वीर्यत्व, गर्भाशय में प्रवेश करता है माता के शरीर में। उससे ले करके नौ माह तक गर्भाशय में रहता है। वहाँ भी माता चिकित्सक बनी रहे और जब बाह्यजगत् में आता है वहाँ भी चिकित्सा करने वाली हो। चिकित्सा क्या है? **माता का आहार और व्यवहार ही उसकी चिकित्सा है।** परन्तु देखो ये विद्याएँ हमारे यहाँ वैदिक साहित्य

में आती हैं। वैदिकता में मानव जब प्रवेश करता है तो नाना प्रकार की विद्याओं में परणित हो जाता है।

भौतिक विज्ञान का अन्तिम परिणाम

आज मैं जैसा मेरे पुत्र ने कई काल में कहा है कि जिस राजा के राष्ट्र में समाज में मेरी पुत्रियाँ अपने शृंगार को हनन करके उदर की पूर्ति करती हैं वह कोई राष्ट्र पवित्र नहीं होता। वह कोई राष्ट्र नहीं होता यह मेरे पुत्र ने कहा था। हमें तो यह प्रतीत नहीं है, ऐसा है अथवा नहीं परन्तु देखो, मेरे पुत्र यह उच्चारण करते रहते हैं। मैं उनकी वार्ता की पुनरुक्ति कर रहा हूँ और वह क्या है कि ऐसा राष्ट्र नहीं होना चाहिए। जिस राजा के राष्ट्र में विज्ञान का दुरुपयोग हो ऐसा राष्ट्र नहीं होना चाहिए। मैं एक वार्ता की पुनरुक्ति कर रहा हूँ। एक समय महाराजा महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज को किन्हीं आचार्यों ने यह कहा, किन्हीं ऋषियों ने यह कहा कि महाराज यह जो विज्ञान का काल आता है इस भौतिक विज्ञान का अन्तिम परिणाम क्या होता है? उस समय महर्षि भारद्वाज ने यह कहा कि इस विज्ञान का अन्तिम जो परिणाम होता है वह समाज की मृत्यु होती है और समाज का जीवन होता है। नाना प्रकार की चित्रावलियों में यदि ऋषि-मुनियों के जीवन चरित्र आते हैं, ऋषि-मुनियों की धाराएँ आती हैं, तो उस काल में विज्ञान का सदुपयोग हो रहा है। विज्ञान में मानव रमण करता हुआ और ऊँचा बन रहा है। विज्ञान का जब दुरुपयोग होने लगता है विज्ञान का दुरुपयोग क्या है? चित्रावलियों में मेरी पुत्रियों का अश्लील चित्रण हो रहा है और चित्रों को दृष्टिपात करके प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या उसको पान करके चंचल बनती चली जा रही है, चंचलता आ रही है, कामवासना की प्रवृत्ति हो रही है। अरे! वह विज्ञान ही राष्ट्र का द्रोही और राष्ट्र का घातक बन रहा है, समाज का घातक बन रहा है,जिन चित्रावलियों को दृष्टिपात करके ब्रह्मचारिणी, ब्रह्मचारी जब पान करते हैं तो उनका

ब्रह्मचर्य दूषित होता है और ब्रह्मचर्य के दूषित होने पर आलस्य और प्रमाद की प्रवृत्ति हो जाती है। आलस्य और प्रमाद जब संसार में छा जाता है तो हे राजा! अधिकार की पुकार होती है, कर्त्तव्य का पालन नहीं होता। क्योंकि आलस्य, प्रमाद में कर्त्तव्यवादी प्राणी नहीं रहते। अधिकार तो चाहते हैं अधिकार होना चाहिए। अधिकार चाहते हैं मैं माता हूँ, पिता हूँ, अधिकार से कहते हैं मैं आचार्य हूँ, अधिकार से कहते हैं मैं राजा हूँ, अधिकार से कहते हैं मैं मन्त्रालय में रहता हूँ। परन्तु अधिकार से तो सर्वत्र बनना चाहते हैं। अरे! कर्त्तव्य का पालन क्यों नहीं किया जाता? क्योंकि वह ब्रह्मचर्य के दूषित होने से नहीं किया जाता। एक ब्रह्मचारी विद्या में अध्ययन कर रहा है। यदि वह आलसी और प्रमादी है। उसका ब्रह्मचर्य भ्रष्ट हो गया है तो आलस्य और प्रमाद का परिणाम यह है कि वह कर्त्तव्यवादी नहीं रहा। कर्त्तव्य में रह करके अपने गुरु-आचार्यों से कहता है कि विद्यार्थी हूँ। मुझे अधिकार दो। कर्त्तव्य वह करे या न करे। आचार्य के चरण स्पर्श करे या न करे। परन्तु उसको विद्या अवश्य चाहिए। उसे मानो देखो उत्तीर्ण अवश्य होना चाहिए। वह परीक्षा में महान् बनना चाहता है। अहा! जब विज्ञान का दुरुपयोग जिस काल में भी होता है उस काल में में मानव विद्या से विहीन बन जाता है। ब्रह्मचारी जब दूषित हो जाता है तो विद्या से विहीन बन गया है और जब विद्या से विहीन बन गया तो अधिकार-अधिकार पुकारता है। कर्त्तव्यवाद नहीं रहता तो उसका परिणाम क्या कि समाज और राष्ट्र दूषित हो जाते हैं। जब ये दूषित हो जाते हैं तो राष्ट्र को चाहिए राजा यदि राष्ट्र को क्रान्ति से शून्य बनाना चाहता है, वह यह चाहता है कि मेरे राष्ट्र में महत्ता आ जाए तो वह प्रातःकालीन याग करने वाला बने। वह रूढ़ियों में परणित होने वाला न हो। याग करे समाज को शिक्षा दे। उस राजा के राष्ट्र में प्रजा दुखारी नहीं रहती। उस राजा के राष्ट्र में प्रजा आनन्दयुक्त रहती है। अहा!

इसी प्रकार मैं यह उच्चारण कर रहा था विज्ञान का दुरुपयोग होने से समाज अधोगति को जाता है।

विज्ञान का सदुपयोग होने से उसमें सद्गति आती है, सत्यवादी बनता है, साधक बनता है, मानवता में रमण करता है। परन्तु देखो, ऐसा मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था। आज मैं कोई विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ केवल परचिय देना हमारा कर्त्तव्य है, परिचय देते रहते हैं और वह परिचय क्या है? हे राजन्! तू अपने राष्ट्र और प्रजा को ऊँचा बनाने वाला जब बनेगा, जब स्वयँ तेरा चरित्र, तेरा कर्त्तव्य महान् होगा। माता तू अपने पुत्र का जीवन चाहती है तो माता तू अपने कर्त्तव्य का पालन कर। तू अपने पुत्र को जन्म दे, शिक्षित बना दे। हे माता! तू जन्म देती है, मृत्यु नहीं देती। माता तू जन्म देने वाली बन। जन्म किसका होता है? तेरे बालक का जन्म हो रहा है, तेरे पुत्र का जन्म होता है। माता मृत्यु नहीं दे सकती, माता जन्म देती है, वही उसका कर्त्तव्य है। वह जन्म क्या है? क्योंकि उत्पन्न तो अवश्य हो जाएगा। जन्म है उसको शिक्षित बनाना, उसको पवित्र बनाना, उसको सदाचारी बनाना जिसको तुझे जन्म देना है। परन्तु जब तू जन्म देती है तो तेरी सेवा करने वाला तेरा पुत्र बनेगा। तेरे से प्रथम मृत्यु नहीं होगी। वह महान् बन करके तेरे राष्ट्र, समाज और गृह को यौगिकता में प्रवेश कराता चला जाएगा। ऐसा मेरा विश्वास रहता है।

महाराजा अश्वपति के यहाँ नियमावली

मैंने यह दृष्टिपात किया महाराजा अश्वपति के यहाँ पाँच ऋषि थे जो नियमावली का निर्माण कर रहे थे। राष्ट्र का विधान बना रहे थे और सबसे प्रथम विधान में मेरी प्यारी माताओं का पूजन हो। माताओं का पूजन क्या कि उनको आयुर्वेद का ज्ञान हो। आयुर्वेदाचार्य होगी तो

अपने गर्भ से ऊँची सन्तानों को जन्म देगी। क्योंकि वही उनकी पूजा कहलाई जाएगी। पूजा का अर्थ क्या है? उनका सदुपयोग करना है उसके पश्चात् नियमावली क्या? कि वैज्ञानिक और बुद्धिमान होने चाहिए, यौगिक कक्ष होने चाहिएँ। उसके पश्चात् वनज कक्ष होना चाहिए। वैज्ञानिक सब कक्षों में अपने, कर्त्तव्यों में रमण करते चले जाएँ। यह नियमावली बनाई गई। इसी नियमावली पर राष्ट्र का निर्माण हुआ। निर्वाचन कौन कर रहे हैं? ऋषि कर रहे हैं, ब्रह्मवेत्ता और विवेकी कर रहे हैं। मेरे पुत्र बहुत ऊँची वार्ता किस काल में उच्चारण कर जाते हैं। आजका विचार क्या कह रहा है?

आजका वाक्य हमारा समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक्य उच्चारण करने का हमारा अभिप्राय क्या? कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हम इस संसार सागर से पार हो जाएँ। हम साधना के क्षेत्र में प्रवेश करना चाहते हैं। दर्शनों में जाना चाहते हैं। दर्शनों की विद्या में प्रवेश किया जाएँ। यह बहुत ही ऊँचा है परन्तु नम्रता, पवित्रता होनी चाहिए। यह आजका वाक्य समाप्त, अब वेदों का पाठ होगा।

वेदपाठ. . . . . .

अच्छा भगवन्! आज्ञा

आनन्द मंगलम्

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

दिनाँक: 26 फरवरी, 1977

समय : दोपहर 3 बजे

स्थान : लाक्षागृह, बरनावा

॥ ओ३म् ॥

याग महिमा

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान का प्रायः वर्णन किया जाता है। क्योंकि उसका ज्ञान और विज्ञान इतना महान् और अनन्त माना गया है जिसको कोई भी मानव सीमाबद्ध नहीं कर सकता। क्योंकि वह सीमा से सदैव रहित है। तो मुनिवरो! परमपिता परमात्मा की प्रतिभा अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान की आभाओं को प्रायः हम प्रकट कराते ही रहते हैं। वेद-पाठ आता रहता है और ज्ञान और विज्ञान की विवेचनाएँ आती रहती हैं। हमारा प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है अथवा उसका वर्णन कर रहा है। जब हम उस परमात्मा को अपना वर्णीय स्वीकार कर लेते हैं तो हमारे जीवन में, हमारी क्रियाओं में एक आनन्द हमें प्रतीत होने लगता है।

ऋषि मुनियों के जीवन का रहस्य

हमारे ऋषि-मुनियों ने परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान के लिए बहुत परिश्रम किया। उन्होंने अपने मनस्तत्त्व, प्राणस्तत्व दोनों को एक सूत्र में लाते हुए अपने को समाधिस्थ किया और समाधिस्थ में संसार का जितना भी ज्ञान है अथवा जितना भी वह जान पाता है वह उतना लेखनीबद्ध करके चला जाता है। परन्तु ऐसे नाना ऋषि हुए हैं जिन्होंने भौतिक विज्ञान और

आध्यात्मिक विज्ञान दोनों के ऊपर नाना टिप्पणियाँ कीं और उन्हें जानने का प्रयास किया और उनके जीवन का एक रहस्य रहा है कि वे मनस्तत्त्व व प्राणस्तत्व दोनों को एक सूत्र में लाते थे क्योंकि **मन प्रकृति का प्रतिनिधित्व करने वाला है और यह जो प्राणस्तत्व है इसको आचार्यों ने प्राण कहा है। यह ब्रह्म का वाचक और उसकी आभा जो निर्णित कराता है वह प्राणस्तत्व कहलाता है।** परन्तु आज इस सम्बन्ध में इतनी गम्भीरता में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ।

विचार-विनिमय केवल हमारा यह है कि हमारे ऋषि-मुनियों ने लोक-लोकान्तरों की जो मालाएँ हैं ऋषियों ने उनको अपने मस्तिष्क में धारण किया और उनको जानने का प्रयास किया। उन्होंने समाधिस्थ होकर के एक नहीं, दो नहीं अरबों-खरबों सूर्यों की गणनाएँ कीं। उसी प्रकार चन्द्रलोकों की गणनाएँ की हैं और भी नाना प्रकार के मण्डलों को जानने का प्रयास किया।

आभा का स्रोत

बेटा! एक समय का वाक्य मुझे स्मरण आ गया है। **एक समय हम अपने पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में ओत-प्रोत थे।** कुछ वाक्य चल रहे थे, नाना यौगिक चर्चाएँ प्रारम्भ हो रही थीं। पूज्यपाद गुरुदेव से यह प्रतीत किया कि प्रभु यह आपने कैसे जाना है? जो इतने ब्रह्माण्ड की आप चर्चाएँ करते हैं इतने गम्भीर इन विचारों को हमें अनुभव भी नहीं होने देते कि यह संसार क्या है? परन्तु आपका ऐसा जो विचित्र यह संसार क्या है? परन्तु आपका ऐसा जो विचित्र यह अनुपम जगत् है यह जो विचारों का एक जगत् है प्रभु! इसमें आप हमें ले जाते हैं। इन विचारों के जगत् में कौनसी आभा है और कैसे आपने इसको जाना है?

पूज्यपाद गुरुदेव यह कहा करते थे कि जो भी मानव संसार में विचारक बनना चाहता है वह प्रातःकाल एक याग करता है, उस याग

का नाम हमारे यहाँ ब्रह्म-याग कहा जाता है अथवा ब्रह्म का चिन्तन किया जाता है। प्रातःकाल की ऊषा काल में ऊषा देवी अपनी लालिमा लेकर के आती है, विचार के प्रकाश को ले करके आती है। उसी में प्रत्येक मानव ब्रह्म का चिन्तन करता है और जैसे रात्रि और दिवस दोनों का मिलान होता है उस काल में अपने मनस्तत्त्व जहाँ ऊषा काल आता है, जहाँ अन्धकार और प्रकाश का मिलान होता है ऐसा जो काल है उसे हमारे यहाँ मुनिवरो! 'अप्रतम देवः' उस काल को हमारे यहाँ **सन्ध्या का काल** कहते हैं। उसे सन्ध्या का काल क्यों कहते हैं? क्योंकि उसमें प्रकाश और अन्धकार दोनों का मिलान होता है। प्रातःकाल को भी और सायँकाल को भी विचारक, ब्रह्मवेत्ता अथवा जो ब्रह्म का चिन्तन करने वाला है जो ब्रह्म का चिन्तन करने के लिए तत्पर है और विचारता है उसी प्रातःकाल को वह चिन्तन करता है लोक-लोकान्तर की मालाओं को इतने गम्भीर, इतने अगाध समुद्र में चला जाता है, इतनी अगाध आभाओं में रमण करने लगता है मुनिवरो! क्योंकि ब्रह्म ही एक चैतन्य है। **ब्रह्म की जो चेतनता है, ब्रह्म का जो चेतनमयी स्वरूप माना गया है उसे ब्रह्म-याग कहते हैं अथवा ब्रह्म का चिन्तन कहते हैं** और कहता है हे प्रभु! मैं आपको समर्पित हो गया हूँ इस समर्पितता के आँगन में हमें धारण कराइये।

ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है

मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या? आज मैं तुम्हें यह विचार देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को ब्रह्म का चिन्तन करना है, ब्रह्म में ही रमण करना है उसे मुनिवरो! ब्रह्म-याग कहते हैं। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? जो ब्रह्म का जिज्ञासु है। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? जो अपने को बनाना चाहता है। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? जो स्वर्ग में जाना चाहता है, आनन्द को पान करना चाहता है। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? ब्राह्मण करता है। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता

है? ब्रह्मचारी करता है। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? जो समाधि लगाने वाले महापुरुष होते हैं। विचार विनिमय क्या मुनिवरो! जो माता पिता यह चाहते हैं कि हमारा गृह आनन्दमयी हो जाए। हमारे गृह में स्वर्ग भी हो, आनन्द भी हो, प्रकाश भी हो तो प्रत्येक माता-पिता का यह कर्त्तव्य है कि वह अपने गृह में ब्रह्म का चिन्तन करने वाला हो। ब्रह्म का मनन करने वाला हो। तो माता-पिता अपने में तो कुछ बनना नहीं चाहते और अपने गृह में आने वाले जो बाल्य-बालिकाएँ हैं उनको स्वर्ग में ले जाना चाहते हैं तो यह उनकी मिथ्या कल्पना रहती है। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है पुत्रो! जहाँ देखो ऋषि और उनकी पत्नियाँ दोनो ने चिन्तन किया है, मनन किया है। उनके आश्रम में रहने वाले ब्रह्मचारी ब्रह्म की चरि को ही चरते रहते थे।

सन्तोषी ऋषि महाराज का जीवन

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है पुत्रो! एक ऋषि थे जिनका नाम सन्तोषी ऋषि महाराज था। सन्तोषी ऋषि महाराज महाराज अश्वपति के पुरोहित थे। मुनिवरो! प्रातःकालीन वह दोनों पति-पत्नी ब्रह्म का चिन्तन करते थे तो निर्विकल्प समाधि लग जाती थी, निर्विकल्प समाधि में तल्लीन हो जाते। उनके यहाँ कुछ ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, कुछ ब्रह्मचारिणियाँ भी थीं–निर्विकल्प समाधि में मग्न जब उनको दृष्टिपात करते तो बेटा! वह जो ब्रह्मचारी विद्यालय में उसी प्रकार का चिन्तन करते रहते थे, विद्यालय स्वर्ग बन जाता। विद्यालय में महानता का सदैव प्रदर्शन होता रहता। महानूता में रहते वह मुनिवरो! इतने विभोर हो जाते समाधि में आ करके। वह ब्रह्म की आभा में रमण करते रहते। वह पुरोहित भी थे, विद्यालय में ब्रह्मचारियों को अध्ययन भी कराते। उनकी आभा ब्रह्मचर्य में और ब्रह्म के चिन्तन में रहती। तो मुनिवरो! ब्रह्म के चिन्तन में आज हम अपने में अपने को महान् बनाते

हुए, अपने में ऊर्ध्वा बनाते हुए इस संसार की आभाओं में रमण करने के लिए सदैव तत्पर रहें।

आज मैं तुम्हें कहाँ ले गया हूँ? ब्रह्म का चिन्तन करने वाले पति-पत्नि प्रातःकालीन मध्यरात्रि होती तो प्रभु के आँगन में जाने के लिए आत्म विभोर होना एक स्वाभाविक था क्योंकि वह कहा करते थे हे प्रभु! यह जो तेरा अनन्त जगत् है इसको मैं कैसे जानू? इसको कैसे जान सकता हूँ प्रभु! आपकी अनन्तमयी जो सृष्टि है, अनन्तमयी जो ब्रह्माण्ड है उसको जानने में प्रभु मैं सदैव असमर्थ रहता है। हे भगवन्! आप तो महान् हैं। आप तो विचित्र कहलाते हैं। बेटा! यह जो माता-पिता हैं, एक मानव ब्रह्म का जो चिन्तन करता है तो गृह में रहने वाले बाल्य-बालिकाएँ जब श्रवण करते हैं तो उनका आश्रम, उनका गृह, चाहे वह गृह आश्रम में प्रवेश होने वाले हों, चाहे वह मेरे प्यारे विद्यालय में हों, चाहे वह राजा के यहाँ पुरोहित क्यों न हो वह जहाँ भी जाते हैं स्वर्ग की कल्पना करते हैं। आनन्द की पुकार करते हैं।

मानव का हृदय ही आनन्द

मेरे प्यारे! जब कि आनन्द मानव के हृदय से सम्बन्धित है। मानव का हृदय ही मानव का एक आनन्द है। तो आनन्द को पान करना यह मानव का कर्त्तव्य कहलाता है। **एक आनन्द को पान करना ही इस मनस्तत्त्व और प्राणस्तत्व दोनों को एक आभा में ले जाता है।** परन्तु प्रातःकालीन जब वह ब्रह्म का चिन्तन करते हैं तो उसको ब्रह्मयाग कहते हैं। मैंने बहुत पुरातनकाल में बेटा! तुम्हें निर्णय देते हुए कहा, **यागों का अभिप्राय यह है** "यागम् ब्रह्म लोकः" प्रभु के विभोर में जो मानव जागरूक रहता है वह याग कर्म करता है। यागी कौन है? मेरे पुत्रो! यागी किसे कहते हैं? यागी कहते हैं जो याग करता है। **याग कौन करता है? जो ब्रह्म का चिन्तन करता है।**

महाराजा अश्वपति और ऋषि मुनियों का याग पर सम्वाद

मेरे पुत्रो! मुझे स्मरण आता रहता है एक समय महाराजा अश्वपति के मस्तिष्क में यह वाक्य आया कि मुझे अपने राष्ट्र को स्वर्गमयी, आनन्दमयी बनाने के लिए एक याग करना है तो मुनिवरो! उन्होंने ऋषि-मुनियों की सभा एकत्रित की। उन ऋषि-मुनियों की सभा में नाना ऋषि उपस्थित थे। मेरे पुत्रो! उन ऋषियों में एक ऋषि का नाम था महर्षि कुकरोटक ऋषि महाराज। महर्षि कुकरोटक ऋषि ने कहा, कहो राजन्! किस प्रकार तुमने एकत्रित किया। उन्होंने कहा कि मैं अपने राष्ट्र में याग करना चाहता हूँ क्योंकि मेरा जीवन याग है, मैंने अपने जीवन में यह विचार लिया है कि मेरे जीवन में तो याग ही होता रहता है क्योंकि मैं वास्तव में याग करना चाहूँगा। मेरा याग इतना महान् हो सकता है कि मैं अपने संसार का याज्ञिक बन करके अपने को प्रभु को समर्पित कर सकता हूँ।

ब्रह्मयाग का स्वरूप

जब उन्होंने यह कहा तो ऋषि कहते हैं आगे चल करके महर्षि विभाण्डक और महर्षि सेनकृतिक ऋषि महाराज दोनों ने एक स्वर में कहा कि हे राजन्! आप याग तो करना चाहते हैं, याग की आपकी कल्पना है आप ब्रह्मयाग भी जानते हैं अथवा नहीं? उन्होंने कहा ब्रह्मयाग मैं कुछ जानता हूँ कुछ नहीं जानता। ऋषियों ने कहा कितना जानते हो? उन्होंने कहा कि मैं इतना जानता हूँ कि प्रातःकाल सायँकाल को मैं जब भी जागरूक होता हूँ, मैं जब भी अपने को जागरूक करना चाहता हूँ तो मैं ध्यानावस्थित हो जाता हूँ। प्रभु की महिमा पर विचार-विनिमय करने लगता हूँ और प्रभु के विचार-विनिमय करने से मेरा याग मेरे जीवन को आनन्दित कर देता है। मैं इतना याग करना जानता हूँ केवल। तो महर्षि विभाण्डक कहते हैं हे ऋषि! हे राजन्! तुम

वास्तव में याग के मार्ग को जानना चाहते हो। वास्तव में देखो तुम्हारा यह जो याग है, ब्रह्म जो याग है वह मानव करता है और मानव की एक-एक इन्द्रिय इसमें समर्पित होती है। **प्रत्येक इन्द्रियों के विषय को जानना ही हमारा याग कहलाता है** क्योंकि प्रत्येक इन्द्रियों का जो विषय है, जैसे रूप, रस, गन्ध कहलाता है इन्हीं विषयों में सर्वत्र मानव की आभा निहित रहती है और यही याग का साकल्य कहलाता है और यही ब्रह्मयागी बनने के लिए साकल्य है। उन्होंने कहा प्रभु! यह कैसे? उन्होंने कहा, यह जो नेत्र हैं, घ्राण इन्द्रियाँ हैं, यह एक-एक कृतियों की गाथा गाती रहती है। एक स्वर है वह भी उस महान् ब्रह्म की गाथा गा रहा है। एक सूर्य-चन्द्र है वह भी गाथा गा रहे हैं, एक अश्विनी है, घ्रति है, जमदग्नि इत्यादि भी गाथा गा रहे हैं, विश्वामित्र भी ब्रह्म की गाथा गा रहे हैं। इन ऋषियों को जानना, इन महान् प्रतिभाओं को जानना और इनमें जो रहस्य भरा हुआ साकल्य को जानना अथवा जान करके अग्न्याधान करना और अग्न्याधान करके साकल्य की आहुति देता हो, ''स्वाहा'' कहता हो, वह ब्रह्मयाग कर रहा है। वह देव याग नहीं, ब्रह्मयाग कर रहा है। क्योंकि **ब्रह्मयाग मानव अपनी इन्द्रियों से करता है।**

इन्द्रियों का साकल्य

मुनिवरो! यह जो साकल्य है, इन्द्रियों का साकल्य क्या है? नेत्रों का साकल्य रूप है और श्रोत्रों का साकल्य शब्द है, त्वचा का वायु है इस प्रकार अग्नेय इत्यादि हैं। इस सर्वत्रता को जानना ब्रह्माण्ड का साकल्य कहलाता है। तो ऋषि-मुनि विद्यमान होकर के इस साकल्य को एकत्रित करके याग करते हैं, ब्रह्म आहुति देते हैं। ब्रह्म में आहुति क्या? प्रत्येक इन्द्रियों को ब्रह्म में, आत्म-तत्व में समर्पित करके और ब्रह्म की आभा में ले जाना ही यह मेरे प्यारे! ब्रह्मयाग कहलाता है।

सूत्र

मैं आज तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ कि हमें ब्रह्मयाग करना है। हम ब्रह्म का चिन्तन करने वाले बनें। ब्रह्म का चिन्तन करने वाले स्वर्ग में जाते हैं। ब्रह्मलोक में जाते हैं। वह इस ब्रह्माण्ड को अच्छी प्रकार जानते रहते हैं। सबसे प्रथम हमारे यहाँ ब्रह्म का चिन्तन है। ब्रह्म के चिन्तन के साथ ही, हमारा आत्म चिन्तन के साथ ही हमारा आत्म चिन्तन प्रारम्भ होता है। परन्तु **आत्म चिन्तन और ब्रह्म चिन्तन दोनों एक ही सूत्र में पिरोने से ब्रह्मयाग बन जाता है।** उसके पश्चात् द्वितीय जो याग है वह हमारे यहाँ देवयाग कहलाता है। देवयाग करने वाले–मैं अश्वपति की चर्चाएँ कर रहा था। महाराजा अश्वपति को जब विभाण्डक इत्यादि ऋषियों ने यह निर्णित कराया तो राजा ने कहा प्रभु! मैं ऐसा ही प्रयत्न कर रहा हूँ। भगवान् मनु ने जब राष्ट्र का निर्माण किया था तो मैंने उस विद्या को श्रवण किया है, अध्ययन किया है। मैंने यह जाना है जब तक राजा याज्ञिक नहीं होगा, मांगलिक नहीं होगा वह अपनी प्रजा को कदापि सुन्दर नहीं बना सकेगा। क्योंकि कर्त्तव्य में लाने के लिए, मानव को मानव बनाने के लिए, मानवीयता, राष्ट्रीयता दोनों का सम्बन्ध, दोनों एक सूत्र के मनके कहलाते हैं।

परम आनन्द का मार्ग

मेरे प्यारे! इसीलिए ऋषि-मुनियों ने यह कहा कि राष्ट्र को राजा ऊँचा बनाना चाहता है तो स्वयँ ऊँचा बनने का प्रयास करे। वह प्रजा को सुखद बनाना चाहता है तो यागकर्म करने वाला हो। क्योंकि जिस कर्म को महापुरूष करते हैं उसी कर्म में प्रजा लग जाती है यह उसका कर्म और कर्त्तव्य बन जाता है और वही स्वर्ग और नर्क कहलाता है। क्योंकि स्वर्ग वह इसलिए है कि राजा जो याग करता है, कहता है कि ऋण से अवऋण होना है। प्रत्येक मानव और देवकन्या से यह कहा जाता है कि तुम्हें ऋण से अवऋण होना है। मैं तुम्हें संक्षिप्त परिचय दे रहा हूँ, तुम्हें

ऋणों से अवऋण होना है। जब ऋण से अवऋण होने के लिए राजा प्रेरित होता है, प्रजा में कर्त्तव्य का पालन करता है, ऋणों से अवऋण होने का जब राजा प्रयास करता है तो प्रजा भी करती है। जब एक-दूसरे का ऋणी मानव नहीं रहता तो सुखद और शान्ति की स्थापना हो जाती है। क्योंकि मानव जब तक ऋणी बना रहता है तो सुखद और शान्ति की स्थापना नहीं होती। **वही मानव सुखी कहलाता है जो कर्त्तव्यवादी होता है, महान् होता है।** इसीलिए ऋषि-मुनियों ने कहा हे राजन्! तुम स्वयँ को और प्रजा को महान् बनाना चाहते हो तो तुम्हें महान् बनना ही होगा। महान् तू कैसे बनेगा? महान् तू उस काल में बनेगा जब तू याज्ञिक होगा, माँगलिक होगा। याग-कर्म करना ही तेरा मुख्य उद्देश्य है। जैसे राजा का एक-एक शब्द प्रजा के लिए, राष्ट्र के लिए होता है ऐसे ही राजा का एक-एक कर्म, विचार और ब्रह्म विचार होगा तो वह राष्ट्र के लिए होगा। यदि वह याग-कर्म होगा तो राष्ट्र के लिए होगा क्योंकि राजा जैसा करता है वैसा ही प्रजा करती है और जैसे प्रजा बरतने लगती है वैसे ही विचार होते हैं और जैसे विचार होते हैं वैसा ही वायु-मण्डल होता है। जैसा वायु-मण्डल होता है वैसे ही देवता होते हैं और जैसे देवता होते हैं वैसा ही वायु-मण्डल, यह ब्रह्माण्ड और विचार यह एक सूत्र में पिरो करके बेटा! यहाँ परम आनन्द की स्थापना हो जाती है।

याग करने का अधिकारी

आओ मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को, प्रत्येक देवकन्या को संसार में ब्रह्म-चिन्तन करना है, ब्रह्म मनन करना है। ऋषियों ने जब राजा के लिए कहा तो राजा ने कहा प्रभु! मेरे राष्ट्र में आप भ्रमण करो। मेरे राष्ट्र में कोई ऋणी नहीं है और न मैं किसी का ऋणी हूँ। उन्होंने कहा कि कैसे स्वीकार करें? उन्होंने कहा प्रभु! मैं प्रातःकाल ब्रह्म का चिन्तन करता हूँ उसके पश्चात् देव-पूजा करने

लगता हूँ। उसके पश्चात् जब देव-पूजा समाप्त हो जाती है तो अतिथि सेवा में लग जाता हूँ अश्वमेध याग करता हूँ, पितृ-याग करता हूँ यह पञ्च-याग सदैव मेरे राष्ट्र में होते हैं। मेरी प्रजा में होते हैं और जब मेरे गृह में होते हैं तो मेरी प्रजा में होते हैं और जब मेरी प्रजा में होते हैं तो मेरे राष्ट्र में कोई ऋणी नहीं है। मैं भी ऋणी नहीं हूँ। इसलिए मैं ऋषियों के द्वारा अपना याग-कर्म करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! जब ऋषियों को यह निर्णित कराया तो उस समय उन्होंने कहा याग किया जाए।

आहुति कहाँ चली जाती है

बेटा! वे याग करने के लिए यज्ञशाला का निर्माण करने लगे। उन्होंने एक यज्ञशाला का निर्माण किया, जब यज्ञशाला का निर्माण किया, नाना ब्राह्मणों का निर्वाचन हुआ। मानो यजमान का निर्वाचन किया गया और याग जब प्रारम्भ होने लगा तो एक ऋषि ने राजा से एक प्रश्न किया यजमान से, कहा हे यजमान! यह जो अग्नि में आहुति दी जाती है घृत की, साकल्य की, यह आहुति कहाँ चली जाती है? तो मेरे प्यारे! उस समय यजमान कहता है, हे ब्राह्मण! यह आहुति पृथ्वी में विश्राम करती है। यह तमोगुण में प्रवेश कर जाती है। यह जो साकल्य की आहुति प्रदान करता है यह पृथ्वी के अस्तित्व में प्रवेश कर जाती है। उन्होंने कहा हे भगवन्! मैं यह जानना और चाहता हूँ कि जो प्रदीप्त अग्नि में आहुति प्रदान करते हैं वह कहाँ जाती है? उन्होंने कहा यह तीन धारा वाली आहुति बनती है। एक पृथ्वी में प्रवेश कर जाती है वह भी सतोगुण पृथ्वी में प्रवेश होती है। एक वायु में प्रवेश कर जाती है यह सतोगुणी आहुति कहलाती है और एक आहुति अग्नितत्त्व कहलाती है यह तीन धारा वाली। अग्नि में तीन प्रकार की धाराएँ आभा में प्रकट हो जाती हैं। ऋषि कहता है एक-एक आहुति में तीन-तीन धाराएँ स्थापित हो जाती हैं। यह तीन धाराएँ प्रारम्भ होती हैं और इनमें से तीन-तीन धाराएँ हो करके वेद का ऋषि कहता है, आचार्य

कहता है, वह जो तीन-तीन धाराएँ प्रारम्भ होती हैं, एक-एक में से वह धारा जब सूक्ष्म रूप में जाती है तो बहत्तर-बहत्तर तरङ्गें प्रकट होती हैं और वह जो तरङ्गें तीनों में से उत्पन्न होती हैं इनके ऊपर यदि अनुसन्धान किया जाता तो एक-एक में से निन्यानवे-निन्यानवे तरङ्गों का जन्म हो जाता है और वह वायु-मण्डल में प्रवेश कर जाती हैं। **वायु मण्डल में जितनी गति परमाणुवाद की हो रही है, अणुवाद की हो रही है, लोक-लोकान्तर अपनी आभा में परणित हो रहे हैं। यह जो तरङ्गें हैं इन्हीं तरङ्गों के आधार पर यह ब्रह्माण्ड अपनी गति कर रहा है।** अपनी आभा में रमण कर रहा है।

परिणाम क्या इन वाक्यों का? यह एक सूक्ष्मत्तम यज्ञमयी स्वरूप माना है। यही विचार बन करके वायु-मण्डल में रहते हैं। हम श्वास लेते हैं। प्राण अपनी गति कर रहे हैं। हम अपने जीवन को ऊँचा बना रहे हैं। मुनिवरो! देखो राजा का राष्ट्र महान् बन गया। राजा ने कहा धन्य हो भगवन्! याग-कर्म करने के पश्चात् यजमान उत्तर दे करके मौन हो गया। उन्होंने कहा यजमान का जो महान् विचार है।

पूर्वामुख

मुनिवरो! उन्होंने एक प्रश्न और किया। उन्होंने कहा कि यह तुम्हारा जो मुख है वह पूर्व दिशा को क्यों रहता है? उन्होंने कहा इससे प्रकाश आया है। प्रकाश के लिए हम अपने प्रभु से याचना करते हैं कि हमें प्रकाश प्रदान करो। मेरे पुत्रो! यह प्रकाश के लिए ही है और ऊर्ध्वा में अध्वर्यु रहता है, पूर्व दिशा में प्रकाश आता है साकल्य का भण्डार तो पूर्वास्ति है यह वाक्य तो बेटा! मैं कल ही प्रकट करूँगा।

आत्म चिन्तन की पुनः प्रेरणा

आजका विचार तो मैं केवल यह देने के लिए आया हूँ कि प्रातःकालीन ब्रह्म का चिन्तन करना चाहिए। ब्रह्म का चिन्तन जो करते

हैं वह आत्म-तत्व को प्राप्त करते हैं। जो आत्मवेत्ता होते हैं वह ब्रह्म को प्राप्त हो करके देखो वह आभा में परणित हो जाते हैं। उस आभा में परणित होने के पश्चात् देवत्व को प्राप्त हो जाता है। वह देवता बन जाता वह ब्रह्म जिज्ञासु बन जाता। ब्रह्म की आभा में रमण करने लगता है।

आओ मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें गम्भीरता में ले जाना नहीं चाहता हूँ। केवल विचार यह कि माता-पिता हों, पति-पत्नि हों, उन्हें आत्म-चिन्तन करना चाहिए। ब्रह्मयाग करना चाहिए और ब्रह्मयाग का अभिप्राय है–**याग कहते हैं चिन्तन को, मनन को, इन विचारों को हम ऊर्ध्वा में ले जाएँ।** साकल्य को लेकर के, सूक्ष्म बना करके, अग्नि देवताओं का दूत बन करके सर्वत्र देवताओं को वितरण कर देता है उसी प्रकार मानव अपने विचारों को ले करके द्वितीय विचारों को देता चला जाए। उन्हीं विचारो से यह संसार ऊँचा बनता है।

आनन्द प्राप्ति का मार्ग

आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा प्रकट करने तुम्हें नहीं आया हूँ। **विचार यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या का यह कर्त्तव्य है कि परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सदैव जानते रहें और उस आभा को जानते हुए संसार सागर से पार हो जाएँ** क्योंकि प्रत्येक मानव यह चाहता है कि मेरा जीवन स्वर्गमय हो, मेरा जीवन आनन्दमय हो। आनन्द कैसे प्राप्त होता है? बेटा! जो राजा करता है, प्रजा करती है, माता-पिता करते हैं, बाल्य-बालिकाएँ करते हैं, आचार्य करता उसे ब्रह्मचारी बरतते हैं। जो इसे जानता रहता है, इन वाक्यों के ऊपर मनन-चिन्तन करता है वही तो इस संसार में महानूता और स्वर्ग को लाने का प्रयास करता है। विचार यह है कि हम परमपिता परमात्मा की आभा में रमण करते रहें और उसकी आभा को जानते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएँ। यह है बेटा! आजका वाक्य। **आजका वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह** कि हम

एक-दूसरे के ऋणी न रहें। मानवता हमारे जीवन में हो और इस संसार सागर से हम पार हो जाएँ जो मान अपमान का सागर है। कल मुझे समय मिलेगा तो कल मैं बेटा! अतिथि के सम्बन्ध में एक-दूसरे ऋणी बना हुआ है मानव, इस एक-दूसरे ऋण की चर्चाएँ हम कल करेंगे। आजका वाक्य अब हमारा समाप्त हो गया है। आज के विचार-विनिमय करने का अभिप्राय हमारा यह कि आज हमने अपने विचारों की भूमिका बनाई है। इस भूमिका के सन्दर्भ की चर्चाएँ इससे पूर्व कालों में करेंगे। आजका विचार अब यह समाप्त होने जा रहा है।

आजका विचार अब यह क्या कह रहा है? **हमें एक-दूसरे का ऋणी नहीं रहना चाहिए** और वह मानव स्वर्ग में रहता है जो एक-दूसरे का ऋणी नहीं रहता। ऋणों की चर्चाएँ कल करेंगे कितने प्रकार के ऋण होते हैं? उन ऋणों की चर्चा करने के लिए हम सदैव अपने में मनन करते रहते हैं। प्रत्येक मानव को भी मनन करना है। यह है बेटा! आजका वाक्य अब समय मिलेगा शेष चर्चाएँ हम कल प्रकट करेंगे। अब वेदों का पाठ होगा, उसके पश्चात् यह वार्ता समाप्त हो जाएगी।

वेदपाठ. . . . . .

अच्छा भगवन्! आज्ञा

आनन्द मंगलम्

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

दिनाँक : 13 मार्च, 1978

समय : दोपहर 3 बजे

स्थान : लाक्षागृह, बरनावा

॥ ओ३म् ॥

ऋषियों के उद्‌गार

1. संसार की जितनी विद्यायें हैं वे सब वेद में अंकुर रूप में विराजमान हैं।
2. मानव के कर्मफल के अनुकूल मन का सम्बन्ध रहता है।
3. जब चरित्र भ्रष्ट हो जाता है तो राजा और प्रजा का दोनों का पतन हो जाता है।
4. विवेक अपने कर्त्तव्य के पालन करने से आएगा।
5. मानव का वास्तविक भूषण विवेक है।
6. युवा होने के पश्चात् माता-पिता की सेवा करना पुत्र का कर्त्तव्य है।
7. हे मेरी भोली माता आज संसार में केवल तेरा एक जीवन ऐसा है जो संसार को पवित्र बनाता है।
8. टटीरी नाम आत्मा का हैं और आत्मा के मन और बुद्धि दो पुत्र हैं और यह संसार रूपी सागर है।
9. यदि सब अपने-अपने कर्त्तव्य का पालन करते चले जाएंगे तो संसार स्वर्ग बन जाएगा उस समय यह राम राज्य कहलाएगा।
10. जब मानव संसार में आता है कामधेनु को प्राप्त करने के लिये आता है जिसे प्राप्त कर मानव जीवन का कल्याण हो जाता है।
11. कामधेनु नाम ही सरस्वती है, कामधेनु नाम ही यह गायत्री हैं।
12. जब करोड़ो गायत्रियों का गान किया जाता है तो उससे अमृतधारा प्राप्त हो जाती है।
13. जिस ऋषि ने जिस एक विषय को लिया उसी को संगिता बन गई।
14. परमात्मा की आज्ञा के अनुकूल वेद का प्रसार करने के लिये महान आत्माएं आती हैं।
15. देखो उत्तराखण्ड के पर्वतों में, अब भी ऐसे ऋषि और महर्षि हैं जिनके द्वारा भोज पत्रों पर सर्वश वह सँहिताएँ नियुक्त हुई बैठी हैं।
16. मानव योनि भोग योनि और कर्म योनि दोनों मानी गई हैं।
17. कोई भी राष्ट्र का या किसी का पालन जब कर सकता है जब उसके द्वारा त्याग होगा और आत्मिक ज्ञान होगा।
18. यह वेदवाणी जिसको परमात्मा का ज्ञान कहते हैं यह आत्मा का ज्ञान है, इसमें उदारता और पवित्रता विराजमान है।

Creation, and the Institution of National Order

LORD RAMA'S BIRTH

Look sages ! When the 'sacrifice' was over, the Rishi was given a reverential send-off. In due course the three queens conceived. Mother Kaushalya observed special austerities during the pre-natal period. She abstained from consuming anything from the royal treasury and depended on her own for her sustenance. Raja Dasharatha was very much upset on this account. Once he brought Maharishi Gaunik who was Mother Kaushalya's preceptor. The preceptor asked her as to why she did not accept the royal foods. She, thereupon said, "O; respected Maharishi ! When I was at your hermitage and received instructions, I had decided that I would not marry, and if I did marry, I would beget a son who would be an embodiment of virtues and infused with a patriotic spirit. For this objective I have been avoiding the royal food so that the 'Rajasic' element (the dominating, luxurious element) may not pollute my foetus". Such noble thoughts surge in the minds of only such mothers who have the good of the nation at their hearts. Such mothers are the models of sacrifice and renunciation. The virtues of sacrifice and renunciation are indispensable in the reign of a noble king. Only a nation, which gives high order preference to noble character, attains the zenith of glory and wisdom. Rama was born at such an auspicious time about 8,50,669 years ago. During Raja Dasharath's reign the kingdom, which extended over a vast empire during his ancestor's regime, was confined to a very small area.

Fore Sightedness of Our Great Rishis

Raja Ravana, the king of Lanka (Ceylon) had encroached upon a wide area of Dashrath's kingdom and become its virtual ruler. At this juncture the Rishis (Seers) held a meeting which was attended among others by Vishwamitra. Vashishtha, Maharishi Bharadwaj, Agastya Muni and others. Muni Vashistha was trying to sow the seeds of ancient culture

and civilisation in the heart of Rama from his very childhood. When Rama grew up Vishwamitra took Rama and Lakshmana to the forest and gave them training in warfare.

Sita's Birth

My dear sages ! Once there was a break of famine in Raja Janak's kingdom. The Raja invited many 'Rishis' and beseeched them as to how he could overcome the famine condition. His subjects were in great distress for want of rain. The Rishis suggested, "If your majesty were to plough the soil with a golden plough drawn by two oxen, the desire of your heart would be fulfilled through God's grace". The king did as suggested. It rained in torrents. At such an auspicious occasion Raja Janak was also blessed with a daughter. He was exceedingly pleased and considered himself fortunate. He requested the Rishis to perform the naming caremony of his daughter. The Rishis named her 'SITA' according to the Vedic grammer. 'Si' stands for the blade of the plough and 'Ta' stands for rain. The ploughing of land led to rainfall and the birth of a daughter too. So the child was named 'Sita'. A Swayamvar was arranged in due course and Sita got Rama for her husband. A Swayamvar is a congregation of suitors in which the matrimonial alliance is dicided upon the basis of a competition or upon voluntary choice.

Causes of Lord Rama's Exile

Look sages ! Raja Dasharath had grown old. Following the Raghukula traditions, he wanted to appoint Rama as his successor. But, on account of certain under-currents in the minds of the Rishis, it was planned to send Rama into exile in the larger interests. To achieve this aim they took Kekai into confidence because in her mind the thoughts of National welfare ruled supreme. For this very reason Raja Dasharatha usually took her with him into the battle field for her advice and guidance. As already planned, Kekai asked Raja Dasharath to give the throne to Bharata and send Rama into the forest.

Pujyapad Gurudev

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

*1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
*2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	80.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	60.00
4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	60.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	60.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	80.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	40.00
10.	शंका-निवारण	30.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
*13.	देवपूजा	50.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	125.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	125.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	125.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00
19.	महाभारत के रहस्य	30.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	50.00
22.	महाराजा-रघु का याग	30.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	35.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	35.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	35.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	35.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	40.00
29.	याग-मन्जूषा	40.00
30.	आत्म-दर्शन	30.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	30.00
32.	याग और तपस्या	60.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	35.00
35.	याग-चयन	40.00
36.	दिव्य-रामकथा	120.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	35.00
38.	दिव्य-ज्ञान	40.00
*39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	90.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	40.00
41.	आत्म-उत्थान	40.00
42.	तप का महत्व	40.00
43.	अध्यात्मवाद	40.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	40.00
45.	वैदिक-प्रभा	35.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	40.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	35.00
50.	आत्मा का भोजन	40.00
51.	साधना	35.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	80.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	40.00
*56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	80.00
57.	माता मदालसा	50.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	80.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	80.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	80.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
*63.	यौगिक प्रवचन माला भाग-12	80.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएं	50.00
65.	प्रभु-दर्शन	50.00
*66.	यौगिक प्रवचन माला भाग-13	80.00
67.	समाज उत्थान का मार्ग	50.00
*68.	यौगिक प्रवचन माला भाग-14	80.00
*69.	ब्रह्म की ओर	50.00
70.	ईश्वर मिलन	50.00
71.	यौगिक प्रवचन माला भाग-15	80.00

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध हैः–

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत, (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 01234–240395
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। मोबाइल नं. 09412888050
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष नं. 011-41030481
5. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मो. नं. 9811707343
6. श्री अनिल त्यागी, सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4165802
7. श्री आशीष त्यागी, डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-2642052
8. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
9. श्री विवेक त्यागी, 16ए, अशोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड, (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0122-2316196
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मोबाइल नं. 09910589486
11. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110–मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9899228860, 9871367937
12. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23282088
13. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे.पी. नगर (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09412139333
14. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09313530505
16. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
16. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23977216

श्री विवेक त्यागी, अल्कापुरी, हापुड़ 1000 रुपये

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	250 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री कृष्ण लाल बत्रा, इन्द्री, जिला करनाल	201 रुपये
श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्णा नगर, दिल्ली	100 रुपये
श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़, उत्तर प्रदेश	100 रुपये
मास्टर कवन्धि, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेदमन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है :-

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली

बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFSC Code – PUNB–0014900

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

आज पर्ययण समय में वेदों का गान गाते-गाते हमें ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे विधाता हमारे द्वारा कोई अमूल्य वस्तु प्रदान कर रहा हो। इसका क्या अभिप्राय है कि वेदों का गान गाते समय हृदय में आनन्द कहाँ से आ जाता है। वह कौन-सी अमूल्य निधि है जो हमें परमात्मा ने प्रदान की है? आज हम उस विधाता के बहुत बड़े ऋणी हैं जिस प्रकार मुनिवरो! प्रजा राजा की ऋणी होती है, क्यों होती है? कौन-सी प्रजा ऋणी होती है? मुनिवरो! जो प्रजा राजा के बनाए हुए नियमों के आधार से नहीं चलती, उसके आदर्शों का पालन नहीं करती। इसीलिए आज हम परमात्मा के ऋणी बने बैठे हैं। जो मानव परमात्मा के नियम का अच्छी प्रकार पालन नहीं करता, नाना प्रकार की अशुद्धि करता है, परमात्मा की नाना प्रकार की आलोचनाएँ करता है, वह मानव परमात्मा का महाऋणी है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

(पुष्प-3 – प्रवचन–दिनांक 9 दिसम्बर 1962)